जोबनेर कृषि

जुलाई, 2024 वर्ष : 9 अंक : 7 प्रति अंक मूल्य 25 रुपये वार्षिक शुल्क : 250 रुपये

प्रसार शिक्षा निदेशालय

श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
जोबनेर, जिला–जयपुर (राज.) 303 329

दलहनी फसलों में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन एवं महत्व

पार्वती दीवान[1], सुरेंद्र सिंह[2], राजहंस वर्मा[3]
सुशीला ऐचरा[1] एवं इंदुबाला सेठी[4]
सहायक आचार्य[1], आचार्य[2] (कृषि महाविद्यालय, कोटपूतली)
सहायक आचार्य[3] (श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर)
सहायक आचार्य[4](कृषि महाविद्यालय, पीथमपुरी)
(श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर)

उष्ण कटिबंधीय और उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में प्राथमिक प्रोटीन स्रोत के रूप में फलियों को अत्यधिक महत्व दिया जाता है, जहाँ आहार में प्रोटीन की कमी आती है। दालें, जिन्हें खाद्य फलियाँ भी कहा जाता है, अनाज की तुलना में लगभग तीन गुना अधिक गुणवत्ता वाले प्रोटीन का अनुपात रखती हैं। जबकि भारत में अनाज उत्पादन और खपत दोनों पर हावी है, दालें आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उनके पोषण संबंधी महत्व को पहचानते हुए, संयुक्त राष्ट्र ने बेहतर खाद्य सुरक्षा और पोषण के लिए टिकाऊ खाद्य उत्पादन में उनकी भूमिका के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए 2016 को ''अंतर्राष्ट्रीय दलहन वर्ष'' के रूप में नामित किया। दालें दुनियाभर में आहार का अभिन्न अंग हैं और मानव स्वास्थ्य को बढ़ाने, मिट्टी के स्वास्थ्य को संरक्षित करने, पर्यावरण की सुरक्षा करने और वैश्विक खाद्य सुरक्षा में योगदान देने की अपार संभावनाएं प्रदान करती हैं। फलियाँ आहार में खनिज और विटामिन के सेवन में भी महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन:

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन की मूल अवधारणा मृदा स्वास्थ्य पर्यावरण पर न्यूनतम हानिकारक प्रभाव के साथ वांछित फसल उत्पादकता को बनाए रखने के लिए आवश्यक पौधों के पोषक तत्वों की आपूर्ति है। जो एकीकृत तरीके से जैविक और अकार्बनिक पौधों के पोषक तत्वों के सभी संभावित स्रोतों से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए फसल उत्पादकता के लिए मिट्टी की उर्वरता को इष्टतम स्तर तक बनाए रखने पर जोर देता है। एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन दृष्टिकोण न केवल पर्याप्त उर्वरक अर्थ व्यवस्था के साथ उच्च उत्पादकता प्राप्त करने का एक विश्वसनीय तरीका है, बल्कि मिट्टी के भौतिक–रासायनिक और जैविक गुणों में सुधार करके टिकाऊ कृषि के लिए पारिस्थितिक सुदृढ़ता की अवधारणा भी है। एकीकृत पौध पोषक तत्व प्रणाली की मूल अवधारणा दीर्घकालिक आधार पर फसल उत्पादकता को बनाए रखने के लिए मिट्टी की उर्वरता का रखरखाव और सुधार है। पोषक तत्वों के विभिन्न कार्बनिक–सह–अकार्बनिक स्रोतों का उपयोग उच्च उपज, बेहतर अर्थ व्यवस्था और मिट्टी की उर्वरता में सुधार लाने में बहुत प्रभावी पाया गया है।

गोबर की खाद, पोल्ट्री खाद, वर्मी कम्पोस्ट में नाईट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम और सूक्ष्म पोषक तत्व, माइक्रोबियल और एंजाइम गतिविधियाँ और विकास नियामकों के उच्च स्तर होते हैं और उचित प्रबंधन के साथ निरंतर और पर्याप्त उपयोग से मिट्टी में कार्बनिक कार्बन, मिट्टी के पानी की अवधारण और संचरण में वृद्धि हो सकती है और अन्य में सुधार हो सकता है। मिट्टी के भौतिक गुण जैसे थोक घनत्व, प्रतिरोध और एकत्रीकरण के साथ–साथ विभिन्न प्रकार के पौधों की वृद्धि पर लाभकारी प्रभाव। पोल्ट्री खाद में काफी मात्रा में पौधे के पोषक तत्व होते हैं जिनका उपयोग खाद बनाने के बाद खाद के रूप में किया जाना चाहिए। फॉस्फेटिक उर्वरकों और जैव उर्वरकों के साथ पोल्ट्री अपशिष्टों को समृद्ध करने से इसकी पोषक तत्व सामग्री और उपलब्धता बढ़ सकती है। पोल्ट्री खाद को लंबे समय से सबसे वांछनीय जैविक उर्वरक माना गया है। यह प्रमुख और आवश्यक पोषक तत्वों के साथ–साथ मिट्टी के कार्बनिक पदार्थों को जोड़कर मिट्टी की उर्वरता में सुधार करता है, जिससे नमी और पोषक तत्व बनाए रखने में सुधार होता है।

जैविक खाद का स्रोत :

1. भारी जैविक खाद (एफवाईएम, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद आदि)।
2. सांद्रित जैविक खाद (तेल केक, मांस भोजन, अस्थिभोजन आदि)।

जैव उर्वरक:

राइजोबियम वह जीवाणु है जो सहजीवी जैविक नाईट्रोजन स्थिरीकरण में शामिल होता है। जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण की सफलता मिट्टी में जनसंख्या पर निर्भर करती है।राइजोबियम उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों की मिट्टी में व्यापक रूप से वितरित होता है जिसमें वायुमंडलीय नाइट्रोजन को सहजीवी संघ में स्थिर करने की क्षमता होती है। निर्धारित नाइट्रोजन की मात्रा राइजोबियम के प्रकार, पौधों की प्रजातियों और पर्यावरणीय परिस्थितियों के आधार पर भिन्न होती है।

अकार्बनिक स्रोत:

आरडीएफ–N20%P40%K20%
नाईट्रोजन– स्रोत=यूरिया, अमोनियम सल्फेट, कैन आदि।
फास्फोरस–स्रोत = डीएपी, एसएसपी आदि।
पोटेशियम–स्रोत = एमओपी, एसओपी आदि।
एस–स्रोत =मैक्रो पोषक तत्व उर्वरक के साथ।

एकीकृत क्यों करें ?

- ❖ अनेक पोषक तत्वों की कमी।
- ❖ सिंचित क्षेत्रों में उच्च उत्पादकता और फसल सघनता। जैविक स्रोत उच्च उत्पादकता वाली किस्मों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं के लिए अपर्याप्त है।
- ❖ खनिज उर्वरकों के साथ जैविक स्रोत आवश्यक हो गए।
- ❖ 50 प्रतिशत गोबर का उपयोग ईंधन के रूप में किया जाता है।

महत्व

- ❖ एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को बढ़ाता है।
- ❖ एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन केवल फसलों का उत्पादन बढ़ाता है बल्कि फसलों की गुणवत्ता भी बढ़ाता है।
- ❖ एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन पर्यावरण की गुणवत्ता में सुधार करता है।
- ❖ एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन पर्यावरण के अनुकूल है और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखता है।

मिर्च में कीट एवं रोगों का समेकित प्रबन्धन

पिंकी शर्मा, डॉ. मनीषा शर्मा, डॉ. एम.आर. चौधरी, डॉ. डी. के. यादव, डॉ. दीपक गुप्ता एवं मन्जू नेटवाल
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर (राज.)

देश की अर्थव्यवस्था में मसाला फसलों का महत्वपूर्ण स्थान है। जिसमें मिर्च प्रमुख हैं मिर्च भारत की प्रमुख मसाला फसल हैं यह एक नकदी फसल है। मिर्च हमारे भोजन का प्रमुख अंग है। स्वास्थ्य की दृष्टि से इसमें विटामिन ए व सी पाये जाते है तथा कुछ खनिज लवण भी होते है। मिर्च का उपयोग हरी तथा लाल दोनों अवस्थाओं में किया जाता है। इसे कच्चा सलाद, के रूप में, अचार बनाकर, पकी लाल मिर्च का सुखाकर मसालें के रूप में और हरी मिर्च को सब्जी के लिए प्रयोग में लाते है। मिर्च की फसल पूरे वर्ष ली जा सकती है।

मिर्च के उत्पादन में वृद्धि एवं स्थायितव में अस्थिरता के लिए मुख्य रूप से नाशीजीवों का आक्रमण एवं रोगों का प्रकोप काफी हद तक जिम्मेदार है। ये नाशीजीव मिर्च में 20 से 90 प्रतिशत तक उपज में हानि पहुँचाते हैं। जिसका मुख्य कारण जलवायु परिवर्तन के साथ–साथ कीड़ों एवं बीमारियों का प्रकोप हैं। ये नाशीजीव फसलों तथा उपज को खेत–खलियान से लेकर भण्डारण की भिन्न–भिन्न अवस्थाओं में अलग–अलग समय पर क्षति पहुँचाते रहते हैं। कीट–पतंगों द्वारा होने वाले नुकसान को उचित प्रबंधन तरीकों को अपनाकर काफी हद तक कम किया जा सकता हैं। जिससे देश को मसालें में आत्मनिर्भर होने में मदद मिलेगी।

मिर्च के प्रमुख हानिकारक कीट

1. थ्रिप्स (सिट्रोथ्रिटस डोरसेलिस हुड) :- यह छोटे–छोटे कीड़ें पत्तियों एवं अन्य मुलायम भागों से रस चूसते हैं। इसका आक्रमण प्रायः रोपाई के 2–3 सप्ताह बाद शुरू हो जाता हैं। फूल लगने के समय प्रकोप बहुत भयंकर हो जाता हैं पत्तियां सिकुड़ जाती हैं तथा मुरझाकर रोग का भ्रम होता हैं। पौधे की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उपज बहुत कम हो जाती है।

2. माइट (हेमीटारसोनेमस लाट्स बैंक) :- यह छोटे–छोटे कीट होते हैं, जो पत्तियों की निचली सतह से रस चूसते हैं। परिणामस्वरूप पत्तियां सिकुड करा नीचे की ओर मुड़ जाती हैं।

3. माहू (एफिड गोसीपाई ग्लोवर) :- यह कीट पत्तियों और पौधों के अन्य कोमल भागों से रस चूसकर पत्तियों और कोमल भागों पर मधुरस स्त्राव करते हैं, जिससे सूटी मोल्ड विकसित हो जाती हैं, परिणाम स्वरूप फल काले पड़ जाते हैं। यह कीट मोजेक रोग का प्रसार करता है।

4. फल छेदक (स्पोडोप्टेरा लाइटूरा फेब्रीसस) :- इस कीट की इल्ली फलों में छिद्र करके नुकसान पहुंचाती है। यह फलों में गोल छिद्र बनाकर उसके अंदर के भाग को खाती है। परिणाम स्वरूप फल झड़ जाते है।

5. सफेद मक्खी (बेमेसिया टेबेकाई) :- इस कीट के शिशु एवं व्यस्क पत्तियों की निचली सतह से रस चूसते हैं। जिससे पौधा कमजोर हो जाता है।

6. कटुआ इल्ली (एग्रोटिस इप्सिलोन) :- इस कीट की इल्ली रात्रि के समय पौधों को आधार से काट देती हैं। दिन के समय यह इल्लियां मिट्टी की दरारों और घास–फूस के नीचे छूप जाती है।

7. सफेद लट् (एनोमाला बेनगेलेन्सिस, होलोट्राइका कनसेनगुइना और होलोट्राइका रेनाडड़ी) :- प्रथम मानूसन की वर्षा के समय इस कीट की मादा भूमि में अण्डे देती हैं। जिनसे ग्रब निकलते हैं। जो कि पौधों की जड़ों को खाते हैं। प्रौढ कीट पौधों की पत्तियों को खाते है।

मिर्च में लगने वाले प्रमुख रोग

1. आर्द्रगलन : यह रोग नर्सरी में पौधों की छोटी अवस्था में लगता है। इस रोग के प्रकोप से पौधे का जमीन की सतह पर स्थित तने का भाग काला पड़कर गलने लग जाता है। और नन्हें पौधे गिरकर मरने लगते है। यह रोग भूमि एवं बीज बीज के माध्यम से फैलता है।

2. चूर्णिल आसिता (पाउडरी मिल्ड्यू) : इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों पर सफेद चूर्ण के रूप में दिखाई देते हैं धीरे–धीरे यह रोग सम्पूर्ण पौधे पर फैल जाता है। जिससे पूरा पौधा ही सफेद नजर आने लगता है। रोग का प्रकोप अधिक होने से सम्पूर्ण पौधा सूख जाता हैं तथा पौधे के बीज सिकुडकर छोटे हो जाते है।

3. श्यामवर्ग (एन्थ्रेक्नोज) : इस रोग के लक्षण पत्तियों पर दिखाई देते है। पत्तियों पर छोटे–छोटे काले धब्बे बनते है व पत्तियों का झडना आरम्भ हो जाता हैं तथा रोग की उग्र अवस्था में शाखायें शीर्ष से नीचे की तरफ सूखने लगती है। इसके अतिरिक्त पके हुए फलों पर भी बीमारी के लक्षण दिखाई देते है।

4. जीवाणु धब्बा :- इस रोग से पत्तियों पर शुरू में छोटे–छोटे जलीय धब्बे बनते हैं जो बाद मे गहरे भूरे से काले रंग के उठे हुए दिखाई देते है व अन्त में पत्तियाँ पीली पड़ कर झड़ जाती है।

5. पर्णकुंचन व मोजेक रोग :- ये विषाणु जनित रोग है। पर्णकुंचन रोग के कारण पौधे के पत्ते सिकुड़ कर मुड़ जाते हैं तथा छोटे रह जाते है व इन पर झूर्रिया पड जाती है। मोजेक रोग में पत्तियों पर गहरे व हल्का हरा पीलापन लिए हुए धब्बे बन जाते हैं। उक्त रोगों के फैलाने में कीट अहम भूमिका निभाते है।

समन्वित नाशीजीव प्रबंधन :-यह फसल उत्पादन एवं फसल सुरक्षा की मिली–जुली प्रणाली है जिसका मूल सिद्धांत कर्षण क्रियाओं, भौतिक, यान्त्रिक, जैविक और रासायनिक नियंत्रण के बीच समन्वय स्थापित करना हैं। इस विधि को अपनाते समय कृषक भाइयों को यह भी ध्यान देना है कि उनका दृष्टिकोण लाभ के साथ–साथ मित्रता निभाने की ओर हो अतः इस विधि को अपनाकर मिर्च की फसलों में लगने वाले हानिकारक नाशीजीवों का प्रबंधन निम्नलिखित प्रकार से कर सकते है।

1. **सस्य विधियों द्वारा कीट प्रबन्धन :-** फसलों के खेत की तैयारी हेतु गहरी जुताई करना चाहिए। जिससे हानिकारक भूमिगत नाशीजीवों के वयस्क, गिडार, इल्लिया तथा अण्डे इत्यादि जो मृदा में सुषुप्तावस्था में रहते हैं तथा जुताई करने से मिट्टी से बाहर आ जाये इसके पश्चात् तेज धूप, परजीवी कीटों तथा परभक्षी कीटों, चिड़ियों एवं अन्य जीवों द्वारा नष्ट हो जाते हैं।
   - ✧ भूमि में 2.5 कि.ग्रा. ट्राईकोडर्मा, 100 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से फसल की बुवाई से पूर्व अवश्य मिलाना चाहिए जिससे बीमारियों का प्रकोप कम होता है।
   - ✧ उर्वरकों की अनुशंसित मात्रा और कार्बनिक खादों का प्रयोग करना चाहिए जैसे फसलों में अधिक मात्रा में नाइट्रोजन का प्रयोग करने से चूषक कीटों का आक्रमण बढ़ जाता है।
   - ✧ फसल की बीज जनित व मृदा जनित रोगों से बचाने के लिए बीज को ट्राईकोडर्मा, 4.6 ग्राम और कवकनाशी दवा मेंटालेक्सिल 6 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से या कार्बन्डिजिम

2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करके ही बुवाई करें।

5. मिर्च की फसल को भूमिगत व चूसक कीटों से बचाने के लिए थायामिथोक्जाम 5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीज का उपचार करना चाहिए।
6. फसल में लगने वाले रस चूसने वालों कीटों से बचाने के लिए नीम की खली 100 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की दर से भूमि में प्रयोग करें।
7. उचित फसल – चक्र का चुनाव करना चाहिए।
8. मिर्च की बुवाई उचित समयानुसार करके कीटों द्वारा होने वाली हानि से फसल को काफी हद तक बचाया जा सकता है।
9. क्यारियों में जल निकास का उचित प्रबंध करें।
10. रोग रहित पौध का रोपण करें। पौध से पौध व पंक्ति से पंक्ति की दूरी, इत्यादि को ध्यान में रखकर बुवाई करें।
11. स्वास्थ्य और प्रमाणित बीज बोना चाहिए।

2. यांत्रिक नियंत्रण :-

- ❖ प्रकाश जाल, पीले चिपचिपे लाल एवं सर्वेक्षण द्वारा कीटों की निगरानी एवं पूर्वानुमान लगाना चाहिए।
- ❖ इन जालों को खेत में कीटों की उपस्थिति पता करने के लिए 2–4 ट्रैप प्रति एकड़ की दर से लगाना चाहिए। तथा इन्हें हमेश फसल की ऊंचाई से 1–2 फुट ऊपर लगाना चाहिए।
- ❖ हानिकारक कीटों के अण्डों एवं सूंडियों को पकड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
- ❖ कीटों व रोगों से ग्रसित पौधों को खेत से निकाल कर नष्ट कर देना चाहिए।

3. जैविक नियंत्रण

- ❖ मित्र कीटों को पहचानकर इनका संरक्षण करना चाहिए, जैसे मकड़ी, मक्खी, बग, पाइडेरस, प्रोइंगमेन्टिस, ट्राइकोग्रामा क्राइसोपर्ला, किशोरी मक्खी, टाइगर बीटिल कैराविड बीटिल, मिरिड बग , लेडी बर्ड बीटिल, ड्रैगनफ्लाई परभक्षी झींगु, मीडोग्रास हो पर इत्यादि।
- ❖ मिर्च में माहू के नियंत्रण के लिए परभक्षी कीट क्राइसोपरला के 18 से 20 हलार ग्रब प्रति एकड़ की दर पूरे खेत में छोड़ना चाहिए।
- ❖ फसल में लगने वाली हानिकारक सूंडियों को मारने के लिए बेसिलस, थूरेन्जिन्सिस (बी.टी.) 1–1.5 मि.ली. या ग्रा. प्रति लीटर पानी की दर से धोल बनाकर छिड़काव करें।
- ❖ फसल में लगने वाली इल्लियों, सूंडियों तथा चूसक कीटों के नियंत्रण के लिए ब्यूवेरिया बैसियाना का उपयोग 1–1.5 मि.ली. या ग्रा. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।
- ❖ ट्राइकोडर्मा से बीच का उपचार 4–5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके ही बुवाई करें।

4. रासायनिक नियंत्रण

- ❖ जब अन्य विधियों द्वारा कीट नियंत्रण में आशानुसार सफलता नहीं मिलती है तो इस दशा में मान्यता प्राप्त कीटनाशियों का उपयोग उचित मात्रा में करना चाहिए।
- ❖ थ्रिप्स, माहू व सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए थायोमियोक्साम 25 डब्ल्यू. जी.की 3 ग्राम प्रति 15 लीटर पानी में या इमीडाक्लोप्रिड 0.3 मिली./लीटर या डायमेथोएट 30 ई.सी. की 1 मिली. / लीटर या एसीफेट 1ग्राम / . लीटर या एसिटामाप्रिड 0.1 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिडकाव करना चाहिएं
- ❖ माइट के नियंत्रण के लिए डायकोफाल 2.5 मिली या ओमाइट 3 मिली प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- ❖ फल छेदक, कटुआ इल्ली व सफेद लट् के नियंत्रण के लिए क्वीनालफॉस 25 ई.सी. की 2 मिली. / लीटर या क्लोरोपायरीफॉस 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- ❖ अन्य हानिकारक कीटों जैसे बेधक व कुतरने वाले इत्यादि के नियंत्रण के लिए नीम का अर्क 4 मि.ली./ लीटर या नीम तेल 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में धोल कर छिड़काव करें।
- ❖ आर्द्रगलन, ऐन्थ्रेक्नोज उकटा रोग व फल गलन रोग के नियंत्रण के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2.5 ग्राम/लीटर या ब्लाइटॉक्स 50 या डाइथेन एम – 45 या मेटालेक्सिल 0.25 प्रतिशत धोल का साप्ताहिक छिड़काव करें। बोर्डो मिश्रण (1 प्रतिशत)
- ❖ चूर्णित आसिता रोग के नियंत्रण के लिए कैराथन (0.1 प्रतिशत या कैलिक्शिन 0.05 प्रतिशत का 10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिएं
- ❖ पर्ण कुचंन व अन्य विषाणु जनित रोगों के नियंत्रण के लिए रोग वाहक कीटों को नष्ट करने के लिए डायमिथोएट 1 मिली./ लीटर पानी में घोलकर व दिनों के अंतर पर छिड़काव करें या एकतारा 0.3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर 30 दिनों के अंतर पर छिड़काव करें।
- ❖ जीवाणु म्लानि व जीवाणु पत्ती धब्बा रोग के नियंत्रण के लिए पलान्टोमाइसिन 2 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- ❖ सभी प्रकार के रसायनों का छिडकाव सुबह या शाम के समय ही करना चाहिए।

मोठ की वैज्ञानिक खेती

राजेश चौधरी1, रोशन चौधरी 2 और अमित कुमावत3
1विद्या वाचस्पति छात्र, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
2उपनिदेशक अनुसंधान, अनुसंधान निदेशालय श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय,जोबनेर
3सहायक आचार्य, शस्य विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

पश्चिमी राजस्थान में उगाई जाने वाली दलहनी फसलों में मोठ प्रमुख फसल है। इसमें सूखा सहन करने की क्षमता अन्य दलहनी फसलों की अपेक्षा अधिक होती है, इसलिए यह असिंचित क्षेत्रों के लिए लाभदायक है, इसकी जड़ें अधिक गहराई तक जाकर भूमि से नमी प्राप्त कर लेती है, राजस्थान के पश्चिमी क्षेत्र में मोठ की पैदावार राज्य की कुल पैदावार का 99 प्रतिशत होती है, मोठ की औसत उपज 338 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर के लगभग है, उन्नत तकनीकों द्वारा खेती करने पर 25 से 60 प्रतिशत तक अधिक पैदावार प्राप्त की जा सकती है। राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र देश के प्रमुख

मोठ उत्पादक राज्य हैं, जिनमें राजस्थान देश में मोठ ऊत्पादन में पहले स्थान पर आता है। राजस्थान में मोठ का क्षेत्रफल 96.75 प्रतिशत और उत्पादन 94.49 प्रतिशत होता है। यह न सिर्फ खून को साफ करती है, बल्कि पाचन सिस्टम को भी दुरुस्त रखती है। मोठ दाल को अंकुरित कर खाने से उसमें ताकत दोगुना हो जाती है। यह भारत देश की दाल है जो अब अधिकतर दुनिया में खाई जा रही है। मोठ दाल भी अन्य दालों की तरह फलियों से निकाल कर सुखाई और दाल बनाई जाती है। इस दाल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उगाते समय इसके पौधों को अन्य दालों की तरह बहुत अधिक पानी (सिंचाई) की जरूरत नहीं होती। इसकी जड़े इतनी गहरी हो जाती हैं कि यह जमीन के अंदर से ही नमी सोख कर पानी की कमी पूरी कर लेती है। इसकी यही विशेषता इसे अन्य दालों से अलग रखती है। इसकी फलियों से तो दाल बन जाती है तो बाकी फसल पशुओं के चारे के काम आती है। गाय–भैंस आदि इसके पौधों को बड़े चाव से खाती हैं और दूध भी ज्यादा देती हैं। मोठ की अंकुरित दाल तो काफी नाम कमा रही है। इस मोठ दाल को कच्चा भी खाया जा सकता है तो हल्का स्टीम्ड कर टमाटर, प्याज की चाट जैसी बनाकर भी मजा लूटा जा सकता है। फूड एक्सपर्ट के अनुसार मोठ की अंकुरित दाल में सामान्य दाल से दो गुणा ताकत हो जाती है।

भूमि एवं तैयारी : मोठ की खेती हल्की भूमियों में अच्छी होती है, मोठ के लिए बलुई दोमट एवं बलुई भूमि उत्तम होती है, भूमि में जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए, मोठ की खेती के लिए दोबारा हेरों से जुताई कर पाटा लगा देना चाहिए तथा एक जुताई कल्टीवेटर से करना उचित रहता है।

उपयुक्त जलवायु : मोठ की फसल बिना किसी विपरीत प्रभाव के फूल और फली अवस्था में उच्च तापमान को सहन कर सकती है और इसकी वृद्धि और विकास के लिए 25 –37 सेन्टीग्रेड तापक्रम की जरूरत होती है। वार्षिक वर्षा 250–500 मि.मी. और उचित निकास की जरूरत होती है।

बीजोपचार एवं बुवाई : उन्नत किस्म का उपचारित बीज बुवाई के लिए उपयोग में लेना चाहिए। मृदा जनित रोगों से बचाव के लिए बीजों को 2 ग्राम थीरम और एक ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति कि.ग्रा और 3 ग्राम थीरम प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचार करना चाहिए। फफूंदनाशी दवा के उपचार के बाद बीजों को राइजोबियम और पी.एस.बी. कल्चर 5–7 ग्राम मात्रा प्रति कि.ग्रा. बीज के हिसाब से उपचारित करना चाहिए। मोठ की बुआई 15 जुलाई तक कर देनी चाहिए। लेकिन शीघ्र पकने वाली किस्मों की बुवाई 30 जुलाई तक की जा सकती है। मोठ की बुवाई पंक्तियों से पंक्तियों की दूरी 45 सेंटीमीटर रखते हुए करनी चाहिए।

उन्नत किस्में : आरएमओ– 40, आरएमओ–225, काजरीमोठ–2, काजरी मोठ–3, आरएमओ–257

फसल चक्र : अधिक उपज प्राप्त करने एवं भूमि की उर्वरा शक्ति बनाए रखने के लिए उचित फसल चक्र अपनाना चाहिए। वर्षा आधारित क्षेत्रों में मोठ–बाजरा फसल चक्र उचित रहता है।

खाद एवं उर्वरक : मोठ दलहनी फसल होने के कारण इसे नाइट्रोजन की कम मात्रा की आवश्यकता होती है। एक हैक्टेयर क्षेत्र के लिए 20 किलोग्राम नाइट्रोजन व 40 किलोग्राम फॉस्फोरस की आवश्यकता होती है। मोठ के लिए समन्वित पोषक प्रबंधन उचित रहता है। इसके लिए खेत की तैयारी के समय 2.5 टन गोबर या कंपोस्ट की मात्रा भूमि में अच्छी प्रकार से मिला देनी चाहिए। इसके उपरांत बुवाई के समय 44 किलो डीएपी एवं 5 किलोग्राम यूरिया भूमि में मिला देना चाहिए व बुवाई से पहले 600 ग्राम राइजोबियम कल्चर को 1 लीटर पानी व 250 ग्राम गुड़ के घोल में मिलाकर बीज को उपचारित कर छाया में सूखा कर बोना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण : मोठ की फसल को खरपतवार बहुत हानि पहुंचाते हैं। खरपतवार नियंत्रण के लिए बाजार में उपलब्ध पेंडीमिथालीन (स्टॉम्प) की 3.30 लीटर मात्रा को 500 लीटरपानीमें घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर की दर से समान रूप से छिड़काव कर देना चाहिए। फसल जब 25–30 दिन की हो जाए तो एक गुड़ाई कस्सी से कर देनी चाहिए। यदि मजदूर उपलब्ध न हो तो इसी समय इमेजीथाईपर (परसूट) की बाजार में उपलब्ध 750 मिली मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव कर देना चाहिए।

बीज उत्पादन : किसान अपने घर पर भी अच्छी किस्म के बीज का उत्पादन कर सकते हैं। खेत के चयन के समय कुछ सावधानियां रखनी चाहिए। पिछले साल इस खेत में मोठ नहीं उगाया गया हो। भूमि में जल निकास की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए। प्रमाणित बीज के लिए खेत के चारों ओर 10 से 20 मीटर तक मोठ का कोई खेत नहीं होना चाहिए। खेत की तैयारी बीज एवं उसकी बुवाई, पोषक प्रबंधन, खरपतवार नियंत्रण, रोग एवं कीट नियंत्रण का विशेष ध्यान रखना चाहिए। बीज के लिए लाटा काटते समय खेत के चारों तरफ 5 से 10 मीटर छोड़कर फसल की कटाई करनी चाहिए। लाटे को खलिहान में अलग सूखाना चाहिए एवं दाने को फलियों से निकालकर अच्छी प्रकार सुखाना चाहिए जिससे 6–9 प्रतिशत से अधिक नमी न रहे। इसके बाद बीज को ग्रेडिंग कर उपचारित कर लेना चाहिए तथा लोहे की टंकी में भरकर भंडारी कर देना चाहिए। इस बीज को किसान अगले वर्ष बुआई के लिए उपयोग कर सकते हैं।

कटाई एवं गहाई : जब मोठ की फलियां पक कर भूरी हो जाए तथा पौधा पीला पड़ जाए तो फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। लाटे को अच्छी प्रकार सूखने के पश्चात थ्रेसर द्वारा दाने को अलग कर लिया जाता है।

उपज : मोठ की उन्नत तकनीकों द्वारा खेती करने पर 6 से 8 क्विंटल दाने की उपज प्रति हैक्टेयर प्राप्त की जा सकती है।

कपास के मुख्य कीट एवं उनका समन्वित प्रबंधन

ममता देवी चौधरी[1] एवं अर्जुन सिंह जाट[2]
[1] विषय वस्तु विशेषज्ञ, [2]वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष
कृषि विज्ञान केन्द्र, मौलासर (नागौर),
कृषि विश्वविद्यालय जोधपुर

कपास भारत की प्रमुख फसलों में से एक है जो देश के आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कपास की उच्च उपज वाली किस्मों के विकास, प्रौद्योगिकी के उपयुक्त हस्तांतरण, बेहतर कृषि प्रबंधन प्रथाओं को अपनाने एवं संकर बीटी कपास की खेती के तहत बढे हुए क्षेत्र के माध्यम से भारत दुनिया का सबसे बडा कपास उत्पादक बन गया है। कपास की फसल की कम पैदावार के लिए कीट व रोग प्रमुख रूप से उत्तरदायी है। कपास

को हानि पहुँचाने वाले कीटों की विभिन्न प्रजातियों में कुल 12 कीट आर्थिक क्षति की दृष्टि से प्रमुख माने जाते हैं। कपास की फसल को सबसे अधिक क्षति रस चूसने एवं डोडी या टिंडे भेदने वाले कीटों से होती है। वर्श 2002 में बीटी कपास के आगमन के बाद कपास की फसल में हानिकारक कीटों के परिदृश्य में बहुत बडा परिवर्तन देखने को मिला है। कपास की फसल में पहले टिंडे बेधक कीटों (लेपिडोप्टेरा कीटों) से अधिक नुकसान होता था किन्तु बीटी कपास के आगमन के बाद इनके प्रकोप में कमी आई है परन्तु लगातार संवेदनशील बीटी संकर कपास लगाने की वजह से चूशक कीटों के प्रकोप में दिनोंदिन बढोतरी देखने में आ रही है। पर्यावरण की रक्षा ओर बेहतर उपज प्राप्त करने के लिए सभी किसानों को एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन (आईपीएम) रणनीति को अपनाने की आवश्यकता है। कीट और बीमारी की सही पहचान आईपीएम का पहला कदम है।

कपास के नाशीजीव

चूसक कीट

सफेद मक्खी - इस कीट के शिशु व वयस्क कपास की वानस्पतिक वृद्धि के समय से टिंडे बनने तक पौधों से रस चूसक फसल को हानि पहुँचाते है तथा पत्तों का मरोडिया रोग भी फैलाते हैं। कीटों के मधुस्राव करने पर काली फफूंदी आने से पत्तों की भोजन बनाने की क्षमता प्रभावित होती है। सफेद मक्खी का प्रकोप होने पर पत्तियां सूख कर काली होने लगती हैं। इस कीट का आर्थिक क्षति स्तर 8 –10 वयस्क/पत्ती है।

मिली बग-इस कीट के शिशु व वयस्क सफेद मोम की तरह होते हैं तथा पौधों के विभिन्न भागों से रस चूसकर उन्हें कमजोर बना देते हैं। ग्रसित पौधे झाड़ीनुमा बौने रह जाते हैं। गूलर (टिंडे) कम बनते हैं तथा इनका आकार छोटा एवं कुरूप हो जाता है। ये कीट मधुस्राव भी करते हैं जिन पर चींटियाँ आकर्षित होती हैं।

हराफुदका - इस कीट का वयस्क हरे पीले रंग का लगभग 3 मिमी लंबा होता है तथा पंखों पर पीछे की ओर दो काले धब्बे होते हैं। शिशु तथा वयस्क पत्ती की निचली सतह से रस चूसकर उन्हें टेड़ी–मेढ़ी कर देते हैं। पत्तियां लाल पड़ कर अंततः सूखकर गिर जाती हैं। इस कीट का आर्थिक क्षतिस्तर– 2 वयस्क या निम्फ/पत्ती है।

माहू/चेंपा- चेंपा के शिशु व वयस्क पत्तियों की निचली सतह पर झुंड में प्रवास करते हैं तथा पत्तियों से रस चूसते रहते हैं। इसके कारण पत्तियां टेढ़ी–मेढ़ी होकर मुरझा जाती हैं अतंतः बाद में झड़ जाती है। प्रभावित पौधे पर काली फफूंदी भी पनपने लगती है जो प्रकाश संश्लेषण की क्रिया को प्रभावित करती है।

थ्रिप्स या पर्णजीवी- थ्रिप्स के वयस्क छोटे, छरहरे एवं पीले–भूरे रंग के होते हैं, जिनके पंख धारीदार होते हैं। नर थ्रिप्स के पंख नहीं होते हैं। मादा कीट पत्ती के निचले सतह पर अंडे देते हैं। नवजात और वयस्क थ्रिप्स पट्टी के भीतरी भाग की कोशिकाओं से रस चूस लेते हैं। इसके प्रकोप से पत्तियां हल्की मुड़कर मुरझाने लगती हैं तथा इनकी सतह बाद में चांदी जैसे रंग की हो जाती है, इसलिए इन्हें सिल्वर लीफ के नाम से जाना जाता है। इस कीट के अधिक प्रकोप से पत्तियों में रतुवा जैसा पदार्थ उत्पन्न होता है जिससे पत्तियों मे भारीपन आ जाता है।

मिरिड बग- मिरिड बग की कुछ प्रजातियाँ हरे व कुछ भूरे रंग की होती हैं जो देश के विभिन्न भागों में पायी जाती है। इस कीट के वयस्क व निम्फ फसल में कपास के रस चूसकर काफी नुकसान पहुंचाती हैं। इसकी वजह से कली और टिंडे समय से पहले झड़ने लगते हैं हरे टिंडों में छोटे–छोटे छेद भी दिखाई देते हैं, उनका आकार छोटा तथा तोते की चोंच की तरह हो जाता है।

टिंडों को भेदने तथा पत्तियों को खाने वाले कीट-

कपास का लाल बग कीट-इस कीट के शिशु व वयस्क दोनों ही पत्ती व हरे डोडियों से रस चूसते हैं। ग्रसित डोडियो पर पीले धब्बे तथा कपास पर लाल धब्बे आ जाते हैं। कपास से रूई निकालते समय, इस कीट के मशीन में पिसने से कपास की गुणवत्ता कम हो जाती है।

कपास का धूसर/डस्की बग-इस कीट के वयस्क 4–5 मिमी. लंबे राख के रंग के या भूरे रंग के व मटमैले सफेद पंखों वाले होते है तथा निम्फ छोटे व पंख रहित होते है। शिशु व वयस्क दोनों ही कच्चे बीजों से रस चूसते हैं जिससे बीज पक नहीं पाते तथा वनज में हल्के रह जाते हैं। गिनिंग के समय कीटों के दबकर मरने से रूई की गुणवत्ता प्रभावित होती है जिससे बाजार मूल्य कम हो जाता है।

कपास का गुलाबी कीट-इस कीट की मादा पौधे को कोमल भागों पर एक – एक करके अंडे देती है। अण्डों से निकलने वाली सुंडी गुलाबी रंग की होती है जो डोडियों में छेदकर घुस जाती है तथा प्रभावित पुष्पों को लार से बने रेशमी धागे से कात देती हैं जिसके कारण पुष्प पूर्ण विकास नहीं कर पाते तथा प्रभावित पुष्प जल्दी ही झड़ जाते हैं। इस कीट की अंतिम पीढ़ी की इल्लियाँ टिंडों के अंदर दो बीजों को जोड़कर उस के अंदर शीत निष्क्रियता में चली जाती हैं। इस कीट का आर्थिक क्षति स्तर 8 वयस्क/ट्रैप लगातार तीन दिन तक या 10 प्रतिशत जीवित इल्ली से ग्रसित पुष्पकलिकाएँ एवं टिंडे।

अमेरिकन कपास की सुंडी-इस कीट की सूंडियां आरंभ में पत्तियों को खाती हैं तथा बाद में डोडी/टिंडा में घुस जाती है। एक सुंडी कई डोडियों को नुकसान पहुँचाती है। इस कीट का आर्थिक क्षति स्तर–एक अंडा या एक इल्ली प्रति पौधा या 5–10 प्रतिशत प्रभावित/क्षतिग्रस्त टिंडे होता है।

चित्तीदार कपास की सुंडी-इसके वयस्क शलभ हल्के रंग के होते हैं इसकी एक प्रजाति के आगे के पंख पर एक सफेद धारी होती है। शुरू की इल्लियाँ शाखाओं के शीर्ष को भेदन करके खाती है। बाद मे कलियों, फूलों और टिंडों को क्षतिग्रस्त करती है तथा क्षतिग्रस्त टिंडे में अंदर जाने के रास्ते को अपने त्यागित मल पदार्थ से बंद कर देती है। कीट से प्रभावित टिंडे से प्राप्त रूई भी अच्छी गुणवत्ता की न होने से बाजार भाव भी प्रभावित होता है। इस कीट का आर्थिक क्षतिस्तर–एक इल्ली/पौधा अथवा 10 प्रतिशत प्रभावित शाखाएँ या सामान्यतः 3 प्रभावित टिंडे/पौधा होता है।

तंबाकू की सुंडी–वयस्क पतंगे के अगले पंख गहरे भूरे रंग के सफेद लहरदार धारियों युक्त व पिछले पंख सफेद होते है। प्रारंभ में शिशु लार्वा तेजी से झुंड में पत्तियों के हरे भाग को खाती है बाद में अकेली सुंडी (लट) पुष्प गुच्छों, कलियों व कच्चे टिंडों को खाकर काफी नुकसान करती है। इस कीट का आर्थिक क्षतिस्तर– एक अंडा समूह या पूर्ण क्षतिग्रस्त पत्ती प्रति 10 पौधे होता है।

कीटों का एकीकृत प्रबंधन

- अगेती व पछेती बिजाई में कीटों का प्रकोप अधिक रहता है। इसलिए कपास की बिजाई मध्य अप्रैल से मई तक कर लें।
- पिछली फसल की जड़ों एवं डंठलों को एकत्रित कर नष्ट करें।
- कपास के खेत के आसपास या मेड़ों पर उगे हुए खरपतवार को नष्ट कर दें, क्योंकि इन पर सफेद मक्खी व अन्य कीटों को आश्रय मिलता है।
- खाद का संतुलित प्रयोग करें। नत्रजन वाली खाद अधिक न ड़ालें।
- कीटनाशकों की कम या अधिक मात्रा नही ड़ालें बल्कि सिफारिश की गई मात्रा ही डालें।
- सिंथेटिक पाइरेथ्राइड़ समूह वाले कीटनाशकों का उपयोग सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए ना करें।
- पीले पाश प्रयोग सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए करें।
- कपास के बीजों को इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यू एस 10 ग्राम/किग्रा. या थाएमिथोक्जाम 25 डब्ल्यू जी 5 ग्राम/किग्रा. से उपचारित करें।
- मई के अन्त, जून व जुलाई तक चुरड़ा, हरा तेला के लिए 40 मि.ली. ईमीडाक्लोपरिड़ (कोन्फीड़ोर) 17.8 एस.एल. को 120–150 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।
- यदि अगस्त सितम्बर माह में सफेद मक्खी का आक्रमण हो जाए तो, सफेद मक्खी के आर्थिक कगार पर पहुँचने पर 40 मि.ली. ईमीड़ाक्लोपरिड़ (कोन्फीड़ोर) 17.8 एस.एल. को 120–150 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।
- मीली बग के लिए 1.0 मिली. प्रोफेनोफास 50 ई.सी. या 2.0 मिली. क्विनालफॉस 25 ई.सी. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।
- कीट प्रकोप की स्थिति में इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल.या थाएमिथोक्जाम 25 डब्ल्यू जी 0.005 प्रतिशत ग्राम या एसिटामिप्रिड 20 एस.पी. 0.004 प्रतिशत का छिड़काव करें।
- एच ए एनपीवी या एस एल एनपीवी की 450 इल्ली समतुल्य/हैक्टेयर का उपयोग करें।

केचुआं खाद के उपयोग से कृषि लागत कम कर उत्पादन बढ़ाएँ

सन्तोष देवी सामोता

सहायक आचार्य, श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

केचुआं खाद : भारतीय कृषि में हरित क्रांति के बाद अन्य बीज, उवर्रक तथा दवाइयों के प्रयोग के कारण उत्पादन मे काफी वृद्धि हुई तथा साथ ही साथ भारी मशीनो एवं दवाओं/कीटनाशकों के प्रयोग के कारण खेत में कड़ापन तथा भूमि में केंचुऐ की संख्यों में कमी होने के कारण भूमि की उर्वरता में कमी आती है। यह भूमि की भौतिक, रसानिक तथा जैविक क्रिया के साथ–साथ मृदा की उवर्राशक्ति का पैमाना कहलाता है क्योकिं यह जीवांश युक्त मृदा में रहकर कार्बनिक पदार्थो को तीव्र गति से खाकर कास्ट के रूप में निकालता है केचुऐं द्वारा निकली इस कास्ट को वर्मीकम्पोस्ट या केंचुआ खाद कहते है।

केंचुआ खाद की रासायनिक संरचना : केंचुआ खाद का रासायनिक संगठन मुख्य रूप से उपयोग में लाये गये अपशिष्ट पदार्थों के प्रकार, उनके स्रोत व निर्माण के तरीकों पर निर्भर करता है। सामान्य तौर पर इसमें पौधों के लिए आवश्यक लगभग सभी पोषक तत्व सन्तुलित मात्रा तथा सुलभ अवस्था में मौजूद होतेहैं।

केंचुआ खाद का रासायनिक संगठन : पी एचः 6.80, नाइट्रोजनः 1.00–1.50 प्रतिशत, फॉस्फोरसः 0.15–0.50 प्रतिशत, पोटेशियमः 0.15–0.56 प्रतिशत, कैल्शियमः 2.00–4.00 प्रतिशत, सोडियमः 0.02 प्रतिशत, मैग्नीशियमः 0.46 प्रतिशत, आयरनः 7563 पीपीएम, जिंकः 278 पीपीएम, मैगनीजः 475 पीपीएम, कॉपरः 27 पीपीएम, बोरोनः 34 पीपीएम

केंचुए की प्रजाति का चयन : केंचुओं की उन प्रजातियों का चयन किया जाता है जिनमें प्रजनन व वृद्धि दर तीव्र हो, प्रातिक तापमान के उतार चढ़ाव सहने की क्षमता हो तथा कार्बनिक पदार्थों को शीघ्रता से कम्पोस्ट में परिवर्तित करने की क्षमता हो। उदाहरणतया आइसीनियाँ फीटिडा, यूडिलस, यूजेनी तथा पेरियोनिक्स एक स्केवेटस।

केंचुआ खाद योग्य पदार्थ : इस प्रक्रिया के लिए समस्त प्रकार के जैव–क्षतिशील कार्बनिक पदार्थ जैसे गाय, भैस, भेड़, गधा, सुअर तथा मुर्गियों आदि का मल, बायो गैसस्लरी, शहरी कूड़ा, प्रौद्योगिक खाद्यान्न व्यर्थ पदार्थ, फसल अवशेष, घास–फूस व पत्तियाँ, रसोई घर का कचरा आदि का उपयोग किया जा सकता है।

केंचुआ खाद बनाने की विधि

1. कार्बनिक अवशिष्ट/कचरे में से पत्थर, काँच, प्लास्टिक, सिरेमिक तथा धातुओं को अलग करके कार्बनिक कचरे के बड़े ढेलों को तोड़कर ढेर बनाया जाता है। मोटे कार्बनिक अवशिष्टों जैसे पत्तियों का कूड़ा, पौधोंके तने, को 2–4 इन्च आकार के छोटे–छोटे टुकड़ों में काटा जाता है। इससे खाद बनने में कम समय लगता है। अवशिष्ट को गाय के गोबर में मिलाकर एक माह तक सड़ाने हेतु गड्ढे में डाल दिया जाता है। उचित नमी बनाने हेतु रोज पानी का छिड़काव किया जाता है। केचुंआ खाद तैयार करने हेतु कार्बनिक कचरे में गोबर की मात्रा कम से कम 20 प्रतिशत अवश्य होनी चाहिए।

2. केचुंआ खाद बनाने के लिए सवर्प्रथम फर्श पर अथवा क्यारी में सब से नीचे मोटे कचरे की (कड़ब, सरसों, तुअर अपशिष्ट आदि) 5–7.5 सें.मी. तह (24 घंटे पूर्व भिगोई हुई) बिछायें। इसके ऊपर 10 सें.मी. बारीक भूसे की तह कचरा (हरा अथवा सूखा) फैलाकर पानी से नम करें। पानी लगभग 30–40 प्रतिशत रहे।

3. अब गोबर की 5 सें.मी. की तह समान रूप से बिछायें। इस प्रक्रिया को तब तक दोहराएँ जब तक गड्ढापूर्ण रूप से ना भर जाए। सबसे ऊपर सड़ा हुआ गोबर व पत्तियाँ रखें ताकि मध्य में ऊँचा रहे एवं किनारे वाले हिस्से नीचे रहें।

4. प्रतिवर्ग मीटर के लिए केंचुओं की संख्या 1000 रखें। इस सतह को मिट्टी, नीम की पत्तियों एवं राख के मिश्रण से ढकें। यह सतह पोषक तत्वों को स्थिर रखेगी। जूट या टाट से मिश्रण ढकें। इससे नमी संरक्षित रहेगी। गर्मी में प्रतिदिन व सर्दी में 2–3 दिनमें एक बार पानी देकर उचित नमी रखें।

5. अनुकूल आर्द्रता, तापक्रम तथा हवा मय परिस्थितियों में 25–30 दिनों के उपरान्त बेड की ऊपरी सतह पर 3–4 इन्च मोटी कंचुआ खाद एकत्र हो जाती हैं। इसे अलग करने के लिए बडे की बाहरी आवरण सतह को एक तरफ से हटाते हैं। ऐसा करने पर जब केंचुए बेड में गहराई में चले जाते हैं तब केंचुआ खाद को बेड से आसानी से अलग कर तत्पश्चात बेड को पनुः पूर्व की भाँति महीन कचरे से ढक कर पर्याप्त आर्द्रता बनाये रखने हेतु पानी का छिड़कांव कर देते हैं।

6. तदोपरान्त हर 5–7 दिनों के अन्तराल में, अनुकूल परिस्थतियों में पनुः केंचुआ खाद की 4–6 इन्च मोटी परत बनती है जिसे पूर्व की भाँति अलग कर लिया जाता है। इस प्रकार 40–45 दिनों में लगभग 80–85 प्रतिशत केचुंआ खाद एकत्र कर ली जाती है।

7. अन्त में कुछ केंचुआ खाद, केंचुओं तथा केंचुए के अण्डों (कोकून) सहित एक छोटे से ढेर के रुप में बच जाती है। इसे दूसरे चक्र में केंचुए के संरोप के रुपमें प्रयुक्त कर लेते हैं। इस प्रकार लगातार केचुंआ खाद उत्पादन के लिए इस प्रक्रिया को दोहराते रहते हैं।

डॉ. सुदेश कुमार
प्रसार शिक्षा निदेशक

निदेशक की कलम से

जुलाई माह में कृषि कार्य

प्रिय किसान भाईयों,

1. बाजरे की आ.एच.बी.–173, 177, 223 एवं बायोफोटीफाईड संकर किस्में, आर.एच.बी. –233 एवं 234 के साथ ही एच.एच.बी.–67 (इम्प्रूवड), एच.एच.बी.–226, 299 एवं जी.एच. बी.–538, 558, 719 संकर किस्में एवं राज–171 संकुल किस्म की बुवाई करें।
2. सामान्यतः बाजरे की बुवाई के लिए 4 किलो बीज प्रति हैक्टेयर लेवें तथा कतार से कतार की दूरी 45 से.मी. रखें। बीजों को बुवाई से पूर्व 3 ग्राम थाइरम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें। गुन्दिया या चेपा से फसल को बचाने हेतु बीज को नमक के 20 प्रतिशत घोल (1 किलो नमक को पांच लीटर पानी) में लगभग 5 मिनट तक डुबो कर हिलायें, तैरते हुये कचरे तथा बीजों को बाहर निकाल दें।
3. मूंग की आई.पी.एम. 02–03, आर.एम.जी. 268, आ.एम.जी. 344, आर.एम. जी. 492, एस.एम.एल.–668, आर.एम.जी. 975, एम.एस.जे.–118 उन्नत किस्में हैं तथा चंवला की सी.–152, आर.एस.–9, एफ.एस.–68, आर.सी. –19, आर.सी.–101 (सफेद) एवं सी.पी.डी.–119 (करन चंवला) उन्नत किस्में अपनायें। मूंग, उड़द, चंवला व अरहर के बीज को 3 ग्राम थाइरम व इसके बाद प्रति हैक्टैयर 600 ग्राम राईजोबियम कल्चर से उपचारित करके बोयें।
4. आर.जी.सी.–936, आर.जी.सी.–986, आर.जी.सी.–1002, आर.जी.सी. –1017, आर.जी.सी.–1033, आर.जी.सी.–1038, आर.जी.सी.–1066 (लाठी) कर्ण ग्वार–1 (आर.जी.आर.–12–1), आर.जी.सी.–1055 ग्वार की उन्नत किस्मों की बुवाई करें। खरीफ प्याज की पौध रोपाई इस माह के अन्तिम सप्ताह से शुरू करें।
5. सिंचित मूंगफली में दीमक या सफेद लट का प्रकोप दिखाई देने पर इमिडाक्लोप्रिड 200 एस.एस. 300 मिली. दवा या क्लोरपाईरीफॉस 20 प्रतिशत ई.सी. 1.5 मिली. प्रति लीटर दवा का मिट्टी या बजरी में मिलाकर भुरका कर सिंचाई कर देवें।
6. टमाटर की गत माह तैयार की गई पौध को विषाणु व आन्द्र गलन रोग से बचाने के लिए सायन्ट्रानिलिप्रोल 10.26 ओ.डी. दो मिली. व कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें।
7. जून माह में तैयार की गई पौध जब 15 से 20 सेन्टीमीटर को हो जावे तो 2X2 मीटर की दूरी पर गड्ढ़ों में लगायें।
8. बहुवर्षीय संकर नेपियर घास की उन्नत किस्मों जैसे सी.ओ.–5, ए.पी.बी. एन.–1, आई.जी.एफ.आर.आई–6 व सुप्रिया आदि की सर्कस से रोपाई करें।

प्रमुख संरक्षक : डॉ. बलराज सिंह
संरक्षक : डॉ. सुदेश कुमार
प्रधान सम्पादक : डॉ. सन्तोष देवी सामोता
श्री बी. एल. आसीवाल
डॉ. बसन्त कुमार भींचर
तकनीकी परामर्श : डॉ. एम.आर. चौधरी
डॉ. आर. पी. घासोलिया
डॉ. डी. के. जाजोरिया

बुक पोस्ट

डाक टिकट

पत्रिका सम्बन्धी आप अपने सुझाव, आलेख एवं अन्य कृषि सम्बन्धी नवीनतम जानकारियाँ हमारे मेल jobnerkrishi@sknau.ac.in पर भेजे।

प्रकाशक एवं मुद्रक : निदेशालय, प्रसार शिक्षा, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के लिए अम्बा प्रिन्टर्स, जोबनेर से मुद्रित।